खमैर शीर्ष सूखन (Top Drying) रोग एवं प्रबंधन तकनीक मार्गदर्शिका

वृक्ष सुधार शाखा

राज्य वन अनुसंधान संस्थान

पोलीपाथर, जबलपुर – 482008 (म.प्र.)

2015

मार्गदर्शिका

खमैर शीर्ष सूखन (Top Drying) रोग एवं प्रबंधन तकनीक मार्गदर्शिका

प्रायोजक

अपर प्रधान मुख्य वन संरक्षक
अनुसंधान, विस्तार एवं लोकवानिकी
मध्यप्रदेश, भोपाल (म.प्र.)

प्रस्तुतकर्ता

राज्य वन अनुसंधान संस्थान
जबलपुर (म.प्र.)
2015

खमैर शीर्ष सूखन (Top Drying) रोग एवं प्रबंधन तकनीक मार्गदर्शिका

डॉ. जी. कृष्णमूर्ति, भा.व.से.
संचालक
राज्य वन अनुसंधान संस्थान, जबलपुर

डॉ. ज्योति सिंह
वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी
वृक्ष सुधार शाखा

डॉ. सचिन दीक्षित
प्रभारी एवं वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी
वृक्ष सुधार शाखा

श्री जितेन्द्र सिंह
जे. आर. एफ.
वृक्ष सुधार शाखा

राज्य वन अनुसंधान संस्थान
(वन विभाग का स्वायत्तशासी संस्थान, मध्यप्रदेश शासन)
पोलीपाथर, ग्वारीघाट रोड, जबलपुर (म.प्र.) 482008

Phone: (0761) 2665540, 2666529, Fax: (0761) 2661304
E-mail: sdfri@rediffmail.com

प्रस्तावना

पादप रोगों का अध्ययन महत्वपूर्ण है क्योंकि हमारे अधिकतर भोज्य पदार्थ, कपड़े, भवन निर्माण सामग्री इत्यादि पौधों से प्राप्त होते हैं। कवकों द्वारा इन आर्थिक महत्व वाले वृक्षों की उत्पादकता में कमी आ जाती है तथा प्रस्तावित लाभ नहीं मिल पाता है। अतः कवकों को पहचानकर उनकी रोकथाम के उपाय करना नितांत आवश्यक है।

खमैर कृषि वानिकी एवं सामुदायिक वानिकी के उद्देश्य से लगाया जाने वाला मुख्य वृक्ष है। यह मध्यम आकार का पर्णपाती वृक्ष है। ये सभी स्थानों पर जहां नमी ज्यादा तथा पानी की निकासी सही हो, अच्छी वृद्धि करता है। इमारती लकड़ी के रूप में इसका स्थान सागौन के बाद दूसरा है। इसकी पत्तियां मवेशियों के लिये अच्छी मानी जाती है।

विभिन्न वृक्षारोपणों में सर्वेक्षण के दौरान खमैर के रोगों का विस्तृत अध्ययन किया गया है। ये रोग विभिन्न प्रकार के कवकों द्वारा उत्पन्न होते हैं। इन रोगों के कारण खमैर की उत्पादकता पर काफी प्रभाव पड़ता है। रोगों से खमैर प्रजाति की आर्थिक रूप से काफी हानि पहुंचती है। उचित प्रबंध तथा कवकनाशी के प्रयोग से इन रोगों से होने वाली हानि को कम किया जा सकता है।

प्रस्तुत मार्गदर्शिका में खमैर में पायी जाने वाली बीमारियों तथा उनका निदान विषय का विस्तृत वर्णन किया गया है। क्षेत्रीय स्तर पर विभागीय अमला लाभप्रद हो सके यह प्रयास किया गया है।

इस कार्य हेतु अपर प्रधान मुख्य वन संरक्षक (अनुसंधान, विस्तार एवं लोकवानिकी) मध्यप्रदेश, भोपाल के हम आभारी हैं कि उन्होंने इस काम हेतु वित्तीय सहायता उपलब्ध करायी है।

इस कार्य हेतु पाठ्य सामग्री का संकलन डॉ. ज्योति सिंह द्वारा किया गया है। इस कार्य हेतु सहयोग डॉ. सचिन दीक्षित द्वारा किया गया है।

डॉ. जी. कृष्णमूर्ति (भा.व.से.)
संचालक
राज्य वन अनुसंधान संस्थान
जबलपुर (म.प्र.)

खमैर (*Gmelina arborea*)

परिचय :

प्रस्तुत लेख में खमैर में पायी जाने वाली बीमारियों तथा उनका निदान विषय का विस्तृत वर्णन किया गया है।

- खमैर वर्बीनेसी परिवार का सदस्य है। स्थानीय भाषा में इसे खमैर कहते है। खमैर वानिकी के उद्देश्य से लगाया जाने वाला प्रमुख वृक्ष है। यह एक तेजी से बढ़ने वाली प्रजाति है।
- यह मध्यम से बड़े आकार का पर्णपाती वृक्ष है। इसकी छाल चिकनी भूरी से हल्की पीली होती है। इसकी शाखायें फैली हुई होती है। इसका स्थान इमारती लकड़ी के रूप में सागौन के बाद दूसरा है।
- इसकी पत्तियां विपरीत होती है। नई पत्तियां फरवरी–मार्च में आरंभ होती है। फल गुठलीदार होता है। इसके फल अप्रैल अंत से जुलाई तक पकते है।
- पौधे की मुख्य जड़ लंबी और पतली होती है।
- रेतीली दोमट मिट्टी में इसकी बढ़त अच्छी होती है एवं खराब जल निकासी वाले क्षेत्रों में इसकी बढ़त रूक जाती है और पौधा मर जाता है।
- वर्षा के आंरभ में ही बीज अंकुरण प्रारंभ हो जाता है।
- खमैर ईमारती लकड़ी, लुगदी और चारा का अत्यंत महत्वपूर्ण स्त्रोत है।

उपयोग :

ईमारती लकड़ी, चारा के रूप में, बंजर भूमि सुधार में, दवाओं के रूप में, छाल और जड़े : पेट दर्द, जलन, बुखार, त्रिदोष, बवासीर, सिरदर्द, मतिभ्रम, अल्सर, कुष्ठ रोग, और खून संबंधी बीमारियों में आदि उपयोग किया जाता है।

रोगग्रसित होने के अजैविक कारण :–

1. अत्याधिक कम या अत्याधिक तापमान
2. अत्याधिक कम या अत्याधिक आर्द्रता
3. प्रकाश की कमी या अधिकता
4. ऑक्सीजन की कमी
5. वायु प्रदूषण
6. भूमि में पौधों की वृद्धि हेतु आवश्यक पोषक तत्वों की कमी
7. भूमि की अम्लीयता या क्षारीयता

जैविक कारण :–

1. फफूंदों द्वारा
2. सूक्ष्मकृमि द्वारा
3. बैक्टीरिया द्वारा
4. वाइरस द्वारा
5. कीटों द्वारा
6. मनुष्यों द्वारा
7. जानवरों द्वारा अत्याधिक चराई द्वारा

खमैर में होने वाले कुछ सामान्य रोग -

वृक्षारोपणों में खमैर के रोगों का अध्ययन किया गया है। इन रोगों के कारण खमैर की उत्पादकता पर काफी प्रभाव पड़ता है। रोगों से खमैर प्रजाति की आर्थिक रूप से काफी हानि पहुंचती है। ये रोग विभिन्न प्रकार के कवकों द्वारा उत्पन्न होते हैं। उचित प्रबंधन तथा कवकनाशी के प्रयोग से इन रोगों से होने वाली हानि को कम किया जा सकता है।

- पादप रोगों का अध्ययन महत्वपूर्ण है क्योंकि हमारे अधिकतर भोज्य पदार्थ, कपड़े, भवन निर्माण सामग्री इत्यादि पौधों से प्राप्त होते है। कवकों द्वारा इन आर्थिक महत्व वाले वृक्षों की उत्पादकता में कमी आ जाती है तथा प्रस्तावित लाभ नहीं मिल पाता है। अतः कवकों को पहचानकर उनकी रोकथाम के उपाय करना नितांत आवश्यक है।

- खमैर के पौधों में कई सफेद सड़न और भूरी सड़न वाले फफूंद देखे गये है।

- खमैर के पौधों में मुख्यतः आर्द्रपतन रोग (पोस्ट इमरजेंस डेम्पिंग ऑफ), पर्णदाग रोग (लीफ स्पॉट), पर्ण लक्ष्म रोग पत्तियों का धब्बा रोग, पत्तियों का चूर्णिल आसित रोग, प्ररोह अंगमारी, बीजजनित रोग, जड़ सड़न, हार्ट राट, लकड़ी छेदक, तना संक्रमण रोग (कैंकर रोग) एवं रस चूसक कीट देखे गये हैं।

- खमैर की पत्तियों में पर्णदाग रोग मुख्यतः फोमा ट्रॉपिका डोथियोरिल्ला मैलाइनी मेक्रोफोमिना फेसियोलिना एवं अल्टरनेरिया नामक फफूंद से होता है।

- पत्तियों के ऊपरी व निचली सतह पर पावडर जैसी दिखाई देती है जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया नहीं होती है। अतः पौधा कमजोर होकर मर जाता है।

खमैर के कुछ प्रमुख रोग एवं उनके रोकथाम के उपाय निम्न हैं -

- **खमैर पौधों का जड़ गलन रोग** – सूक्ष्मकृमि व फफूंदों द्वारा जड़े पोली हो जाती है तथा संग्रहित पदार्थ सड़ने लगता है। अन्ततः पौधा सूख जाता है। यह रोग दलदली भूमि में अधिक पाया जाता है। नमी की अधिकता, छांव मृदा में कार्बनिक पदार्थों की अधिकता से यह रोग फैलता है। पोरिया राइजोमारफा जड़ सड़न का मुख्य कारक है। यह सड़ी हुई वनस्पति पर जीने वाला फफूँद है यह जड़ों में भूरी सड़न पैदा करता है जिससे पौधा सड़ जाता है और अंत में नष्ट हो जाता है।

उपचार :

1. पानी की निकासी उत्तम होनी चाहिए।

2. बेवेस्टिन 0.2 प्रतिशत का घोल संक्रमित पौधों की जड़ों में छिड़काव करने से लाभ होता है। अक्टूबर माह के अंत में सल्फेक्स का छिड़काव भी लाभकारी होता है।

- **प्ररोह अंगमारी** – पौधे की अग्र टहनियां सूख जाती है। टहनियों पर काले पिन के आकार की आकृतियां दिखाई देती है। यह रोग ऊपर से नीचे की ओर टहनियों पर फैलता है। सूखी पत्तियां टहनियों पर लटकती दिखाई देती है।

उपचार :

डायथेन एम–45 का प्रभावित वृक्षों के तनों, शाखाओं पर छिड़काव करने से लाभ होता है एवं बीमारी का फैलाव रूक जाता है।

- **तना संक्रमण** या **विकृति रोग (कैंकर रोग) :** लेसीडोप्लोडिया थियोब्रोमाई नामक फंगल रोगजनक को वृक्षारोपण स्थल में खमेर की तना विकृति के लिए रिपोर्ट किया गया। बीमारी के लक्षण हैः बल्कल में फटन तथा काले धब्बे, विकृति तथा रस का टपकना। प्रभावित वृक्ष विभिन्न स्तरों तक निश्तेज हो जाते है। यह रोग मुख्य तने एवं टहनियों को प्रभावित करता है। इस रोग के कारण टहनियों तथा मुख्य तने पर छाल के फटने एवं गठानों जैसे लक्षण दिखाई देते है। प्रभावित पौधा ग्लानता के लक्षण प्रगट करता है और बाद में सूख जाता है। कभी–कभी पौधें में कम विकसित टहनियां (एपीकार्मिक ब्रांचेस) भी निकलने लगती है। यह रोग लेसीडोप्लोडिया थियोब्रोमाई नामक फफूंद के प्रकोप से होता है। अधिकांशत, जब पौधा पत्ती रहित हो जाता है तभी इस फफूंद का प्रकोप देखने को मिलता है। पौधों के कमजोर होने से टहनियां सूखने लगती है और कभी–कभी पूरा पौधा सूख जाता है।

उपचार :

फंगस नाशक डायथेन एम–45 छिड़काव करने से लाभ होता है। जैविक नियंत्रकों में वन तुलसी एवं नीम ने भिन्न प्रतिरोध प्रदर्शित किया। हैं। औषधीय पौधों की पत्तियों का अर्क उपयोग करने से अच्छे परिणाम प्राप्त हुए। सूखी टहनियों को तोड़कर जला देना चाहिये जिससे वृक्षारोपणों में बीमारी के बीजाणुओं की मात्रा को कम किया जा सके।

- **आर्द्रपतन रोग:** खनेर के पौधों में आर्द्रपतन रोग पाया गया है। यह रोग फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम नामक फफूंद के संक्रमण से होता है। आर्द्रपतन रोपणियों का प्रमुख रोग है। इस रोग के कारण मृदा की सतह के समीप पौधें के तने पर जल अवशोषित क्षेत्र बन जाता है जिससे पौधें के तने के ऊतक क्षीण हो जाते है फलस्वरूप पौधें की मृत्यु हो जाती है। यह रोग भूमि में नमी की मात्रा बढ़ने पर ओर अधिक तीव्रता से फैलता है। आर्द्रपतन रोग तब आक्रमण करता है जब रोग के लिये अनुकूल परिस्थितियां हो। (शर्मा इत्यादि 1984) के अनुसार अधिक सिंचाई से उत्पन्न मृदा

नमी रोपणियों पर घनी छांव व मृदा में कार्बनिक पदार्थों की अधिकता इस रोग को फैलने में अधिक सहायक होती है।

उपचार :

इस रोग के बचाव हेतु पौधशाला (रोपणियों) में मिट्टी खाद एवं रेत का संतुलित मिश्रण लेना चाहिए। मृदा में पानी की नियंत्रित मात्रा का ही उपयोग करना चाहिए। ब्रिविस्टिन 0.2 प्रतिशत का घोल बनाकर रोपणियों अथवा ग्रसित वृक्षों की जड़ों में छिड़काव करने से लाभ होता है। सिंह इत्यादि (2003) ने ट्राईकोडर्मा नामक कवक द्वारा जैविक रोगथाम तकनीकी से पौधशालाओं में इस रोग से पौधों को बचाने के सुझाव दिये है

- **पर्ण लक्ष्म / पर्णदाग / पत्तियों का धब्बा रोग रोगः** खमैर की पत्तियों में पर्णदाग रोग मुख्यतः फोमा ट्रॉपिका, डोथियोरिल्ला मैलाइनी, मेक्रोफोमिना फेसियोलिना एवं अल्टरनेरिया नामक फफूंद से होता है। इस रोग के कारण प्रौढ़ पत्तियों में बैंगनी भूरे रंग के कोणीय धब्बे बनते है, जो कि पुरानी नीचे वाली पत्तियों से नई एवं ऊपर की पत्तियों की ओर बढ़ने लगते है। शुष्क जलवायु में ये धब्बे नेक्रोटिक हो जाते है तथा पत्तियों की सतह पर छोटी काली पिकनीडिया दिखाई देने लगती है।

उपचार :

इस रोग के बचाव के लिये रोपणियों में पत्तियों पर पर्णदाग दिखने पर डायथिन एम–45, 0.3 प्रतिशत का घोल 15 दिन के अंतराल में छिड़काव करना चाहिये।

- **पत्तियों का चूर्णिल आसित रोगः** अग्र कलिका, कोमल पत्तियां संक्रमित हो जाती है। पत्तियों पर पाउडर की परत दिखाई देती है। जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया पर विपरीत प्रभाव पड़ता है एवं पत्तियां सूखने लगती है एवं धीरे धीरे पूरा पौधा सूख जाता है।

उपचार :

फायटोलोन 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए।

- **रस चूसक कीटः** खमैर के वृक्षारोपणों स्थलों में यह देखा गया है।यह रस चूसक कीट है जिसे टिंगिस बिसनोई के नाम से जाना जाता है। यह कीट पौधें की अग्रकलिका एवं पत्तियों को चूसता है और कुछ समय बाद पौधा पत्ती रहित दिखने लगता है। बाद में पौधा कमजोर होने पर

फोमेप्सिस मैलाइनी नाम फफूंद से ग्रसित होने लगता है। कभी–कभी पूरा पौधा रोग ग्रसित होकर सूखने लगता है। यह रोग अप्रैल से जून माह तक देखा गया है।

उपचार :

रोग के लक्षण दिखते ही कीटनाशक मोनोक्रोटोफास 0.2 प्रतिशत एवं फफूंद नाशक बिविस्टिन 0.1 प्रतिशत का घोल बनाकर पूरे पौधे पर छिड़काव करना चाहिय एवं रोग ग्रसित सूखी टहनियों को निकालकर जला देना चाहिये जिससे रोग के बीजाणु नष्ट हो जायें। इस प्रकार उपचार कर आने वाले वर्षों में रोग के फैलाव को कम किया जा सकता है।

- **बीजजनित रोग:** बीज इकट्ठा करने के पश्चात् किसी भी डिटरजेंट से धोकर व अच्छी तरह सुखाकर साफ एवं सूखी जगह संग्रहण करना चाहिए। ताकि बीजजनित रोग बीजों के अंकुरण को बाधा न पहुंचाएं।

उपचार :

बीज की फफूंदनाषक दवा जैसे थायरम या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड या मेनकोजेब या कार्बेनडॉजिम कि 3 ग्राम दवा प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करना चाहिए।

नोट : फफूँदनाशियों का प्रयोग करते समय उसकी पैकिंग पर वर्णित तथा अन्य सभी सावधानियाँ रखना आवश्यक है।

खमैर प्रबंधन रणनीति – परिणाम एवं परिचर्चा

वृक्षारोपण स्थल में खमैर शीर्ष सूखन (Top Drying) रोकने के लिये निम्नलिखित उपाय हैं -

- खमैर वृक्षारोपण का उचित सिल्वीकल्चर प्रबंधन किया जाना चाहिये।
- रोगजनकों को हटाने के लिये प्रभावित क्षेत्रों से मृत एवं सूखे वृक्षों का हटाना।
- प्रभावित पेड़ों या मृत वृक्षों को प्रभावित क्षेत्रों से हटाकर लकड़ी को इमारती या जलाऊ लकड़ी के रूप में उपयोग किया जा सकता है तथा इससे कवकों का प्रभाव कम किया जा सकता है।
- प्रायोगिक वृक्षारोपण स्थल में चयनित झाड़ियों एवं घास से सुरक्षा प्रदान की जा सकती है। उक्त स्थल पर मिश्रित प्रजातियों का रोपण भी किया जा सकता है।
- वृक्षारोपण स्थल को जैविक प्रभाव, चराई, मानवीय गतिविधियों से भी खमेर वृक्ष सूख जाते हैं इसीलिये जैविक गतिविधियों से खमेर पर होने वाले हानिकारक प्रभावों को रोकने के लिये वृक्षारोपण स्थलों को कुछ समय के लिये प्रतिबंधित कर देना चाहिये। इस तरह से हम खमैर का चराई से होने वाले मृदा क्षरण को कम किया जा सकता है और मृदा की आर्द्रता तथा पोषक तत्व की उचित मात्रा व्यवस्थित रखी जा सकती है।
- वृक्षारापेण स्थलों पर चराई एवं मृदा क्षरण आमतौर से देखा गया। जिससे मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों की कमी हो जाती है तथा इस प्रकार की रेतीली एवं पहाड़ी मिट्टी खमेर वृक्षों के सूखने का कारण भी है। लैंटाना, कांटेदार झाड़ियां एवं जिजीफस प्रजाति इत्यादि इन स्थलों में पाये गये हैं जिससे यह प्रदर्शित होता है कि इन स्थलों में नमी में कमी हो जाती है जिससे खमैर वृक्षों की वृद्धि प्रभावित होती है।
- वृक्षारोपणों स्थलों में पौधों की वृद्धि की विभिन्न अवस्थाओं के समय सर्वेक्षण किया गया तथा उनमें होने वाले रोगों के लक्षण तथा उनसे हुई हानि का विवरण एकत्र किया गया। रोगग्रसित सामग्री को एकत्र करके प्रयोगशाला में लाकर आइसोलेशन किया गया। रोगजनक कवकों को पोटेटो डेक्स्ट्रोज अगार माध्यम पर कृत्रिम रूप से उगाया गया तथा उनकी पहचान के लिये उनकी आकारिकी व अन्य गुणों का अध्ययन किया गया। इसके लिये मोनोग्रॉफ एवं अन्य उपलब्ध साहित्य तथा विशेषज्ञों की सहायता ली गई।
- इन स्थलों पर महत्वपूर्ण मृदा माइक्रोफ्लोरा का भी अध्ययन किया गया। पौधों एवं रोगकारकों के विकास का अध्ययन किया जायेगा।

- वर्तमान नमूनों में मिट्टी में पोषक तत्वों की कमी देखी गयी है। यह दर्शाता है कि पोषक तत्व जड़ एवं मृदा में खराब स्थिति में है। जिससे जड़ों की चयापचय क्रिया में कमी होने के कारण जड़ तंत्र के विकास में कमी हो जाती है। पूरे स्थल पर जड़ क्षेत्र के नीचे पथरीली लेयर होने से जड़े पानी का अवशोषण सही तरीके से नहीं कर पाती है जिससे सूखने की स्थिति निर्मित हो जाती है। पोषक तत्वों की कमी के कारण एवं मृदा सहजीवी जीवाणु के कारण जड़ क्षय बढ़ जाता है जिस कारण पौधों की मृत्युदर में वृद्धि हो जाती है।
- वर्तमान स्थिति पोषक तत्वों या माइक्रोवियल मूल्यांकन के आधार पर यह स्पष्ट है कि अध्ययन स्थल पर सही तरीके से सावधानीपूर्वक सुधार किया जाना जरूरी है।
- जैविक खाद, एफ.वाय.एम., रेत, यूरिया, पोटाश इत्यादि को प्रभावित क्षेत्रों में लागू किया जाना चाहिये।
- चूने का पानी, कॉपर सल्फेट एवं पानी (1:1:100) के मिश्रण को प्रभावित वृक्ष के पास गढ्डा (एक से दो फीट) खोदकर इसको डालने से जड़गलन रोगजनक कारक एवं दीमक के प्रकोप से बचाया जा सकता है।
- फोर्मेल्डिहाईड–व्यवसायिक श्रेणी (38%) का 250 ml को 4 ली. पानी मे घोलकर मिश्रण बनाकर मिट्टी में डालना चाहिए इसके बाद मिट्टी को पोलीथिन से 2–3 दिवस तक ढंक देना चाहिए। फफूंदीनाशक में जड़ों को डुबाकर फिर मिट्टी में लगाना चाहिए। फफूंदीनाशक जैसे बेविस्टिन, केप्टॉन, फायटोलोन, थायरम इत्यादि का प्रयोग मिट्टी में पौधों को लगाने से पूर्व उपचारित करना चाहिए।
- पुराने तनों में बोर्डो मिक्सर (नीला थोथा 2 किलोग्राम + बुझा चुना 2 किलोग्राम + 250 लीटर पानी) मिलाकर स्प्रे करने से दीमक व फफूंद आदि का नाश होता है।

जैविक नियंत्रण –

पौधों के रोगों में जैविक नियत्रंक जैसे ट्राईकोडर्मा, राइजाबियम, वैम, एक्टिनोंमाइसिटिज का उपयोग करके भी रोगों से बचाव किया जा सकता है तथा पौधों की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाई जा सकती हैं। कुछ औशधीय पौधों का अर्क (Extract) भी प्रयोग किया जाता है। जिनमें फफूँदीनाशक तत्व पाये जाते हैं।

रोगग्रस्त पौधों पर औशधीय पौधों के अर्क का प्रभाव –

पौधों में रोगग्रस्त पत्तियों पर कुछ औषधीय पौधों का अर्क भी प्रयोग किया जाता है। जिनमें फफूँदीनाशक तत्व पाये जाते हैं। औषधीय पौधों की पत्तियों का अर्क उपयोग करने से अच्छे परिणाम प्राप्त हुए। औषधीय पौधों को रक्षात्मक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। जो कार्बनिक रसायन के सबसे उचित स्त्रोत है। परियोजना में कुछ औषधीय पौधों के अर्क को फफूंदों के विकास पर उनके

निरोधात्मक प्रभाव पता करने के लिए से फूड पोइजनस् तकनीकी (Food poisoned Techniques) परीक्षण किया गया। इसमें क्रमशः 5 प्रतिशत, 10 प्रतिशत एवं 15 प्रतिशत सांद्रता में कवक को आदर्श संक्रमण मुक्त वातावरण में संवर्धन कार्य किया गया। इसमें आंवला, सलई, गेंदा, जंगली तुलसी, निर्गुण्डी एवं नीम के पौधों की पत्तियों में अर्क का उपयोग किया गया एवं सबसे प्रभावी परिणाम जंगली तुलसी एवं नीम के पौधों की पत्तियों पर पाया गया। इस पौधें के अर्क में कुछ फफूंद विकास विरोधी तत्व पाये जाते है।

खमेर पौधों में रोगों का रासायनिक नियंत्रण –

इस विधि द्वारा भी रोपणियों में पौधों को रोगग्रस्त होने से बचाया जा सकता है। पौधों में रोग के लक्षण दिखाई देते ही फफूँदीनाशक दवाइयों का प्रयोग करके रोगों को बढ़ने से रोका जा सकता है। प्रायः डाइथेन एम–45, बैविस्टीन, सल्फेक्स या फाइटोलोन का प्रयोग करके रोगों को बढ़कर महामारी फैलने से रोका जा सकता है। फफूँदीनाशक का प्रयोग करने से पूर्व रोपणियों से रोगग्रस्त मृत पौधों का निकाल देना चाहिए। रोगी पौधों के अवशेषों को एकत्र करके जला देना चाहिए। रासायिनिक उर्वरकों का प्रयोग अतिआवश्यक होने पर ही करना चाहिए क्योंकि उनसे पौधों में कुछ रोग उत्पन्न होते हैं तथा उत्पादन भी प्रभावित होता है।

रोग की प्रारंभिक अवस्था में खमैर पौधों में रोगग्रस्त जड़ो पर 10–15 दिनों के अंतराल पर डाइथेन एम–45 का छिड़काव प्रभावी पाया गया था। बीज जनित रोगों से अंकुर की रक्षा के लिए बुवाई से पहले खमेर के बीजों को बैविस्टिन पाउडर (0.2%) के साथ उपचारित करके बोया गया एवं प्रभावी पाया गया।

कल्चरल विधियाँ–

पौधों को रोगग्रस्त होन से बचाने के लिए निम्नलिखित उपाय भी लाभकारी होते है।

1. पौधों से पौधों की दूरी उचित होनी चाहिए।
2. पौधों को क्षतिग्रस्त होने से बचाना चाहिए। पौधों पर सतत् निगरानी रखनी चाहिए।
3. पौधों को अधिक छायादार स्थान पर नहीं रखना चाहिए। सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में पौधों के स्वास्थ्य के लिए महत्वपूर्ण है। पौधों को सूर्य के प्रकाश में रखना चाहिए। अधिक पानी वाल स्थानों में भी रोग ग्रसित पौधों की संख्या अधिक पायी जाती है अतः जहाँ पौधे रखे जाते है वहाँ पानी निकासी की उत्तम व्यवस्था होना चाहिए।
4. बीज संग्रहण स्थान – स्वच्छ, भरपूर सूर्य का प्रकाश, हवा की पर्याप्त व्यवस्था होनी चाहिए, तभी स्वस्थ बीज स्टॉक प्राप्त होगा। बीज हमेशा स्वस्थ्य ही उपयोग करने चाहिए।
5. रोगरहित बीज उत्पादन क्षेत्र का चयन – बीज एकत्र किये जाने वाले पौधे एवं स्थल रोग रहित होना चाहिए।
6. रोपणी हेतु उच्च श्रेणी के बीज स्टॉक का प्रयोग करना चाहिए।
7. बीजों को थायरम या कैप्टान 3 ग्राम/किलोग्राम बीज के साथ उपचारित करके बोये।